ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.21, No.3, July to Sept., 2026/262

Website :https://humanitiesdevelopment.com Impact factor 7.375 IIFS

आचार्य प्रशांत एवं जगद्गुरु रामभद्राचार्य के आध्यात्मिक चिंतन का तुलनात्मक समाजशास्त्रीय एवं दार्शनिक अध्ययन

रवि प्रकाश एवं राकेश कुमार तिवारी

https://doi.org/10.61410/had.v21i3.349

सारांश (Abstract)

भारतीय समाज में धर्म एवं आध्यात्मिकता केवल व्यक्तिगत आस्था के विषय नहीं रहे हैं, बल्कि उन्होंने सामाजिक संस्थाओं, नैतिक मूल्यों, पारिवारिक जीवन और सांस्कृतिक चेतना के निर्माण में केंद्रीय भूमिका निभाई है। आधुनिकता, वैश्वीकरण और डिजिटल क्रांति के समकालीन दौर में आध्यात्मिकता के स्वरूप, भाषा, माध्यम और सामाजिक आधार में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है। इसी बदलते परिदृश्य में आचार्य प्रशांत और जगद्गुरु रामभद्राचार्य समकालीन भारतीय आध्यात्मिक विमर्श के दो विशिष्ट प्रतिमानों के रूप में उभरते हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र दोनों व्यक्तित्वों के चिंतन का तुलनात्मक समाजशास्त्रीय एवं दार्शनिक विश्लेषण करता है। आचार्य प्रशांत जहाँ आधुनिक मनुष्य के लिए अद्वैत वेदान्त को प्रश्न, विवेक और डिजिटल संप्रेषण के माध्यम से पुनर्व्याख्यायित करते हैं, वहीं जगद्गुरु रामभद्राचार्य शास्त्र, परंपरा, रामभक्ति तथा संस्कृत भाष्य के माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक विरासत की निरंतरता को संस्थागत रूप से पुनर्स्थापित करते हैं। यह अध्ययन प्रतिपादित करता है कि दोनों के दार्शनिक निष्कर्षों में भिन्नता के बावजूद, उनका अंतिम लक्ष्य मानव चेतना का आंतरिक रूपांतरण ही है।

प्रमुख शब्द (Keywords): आचार्य प्रशांत, जगद्गुरु रामभद्राचार्य, अद्वैत वेदान्त, विशिष्टाद्वैत, रामभक्ति, डिजिटल आध्यात्मिकता, समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य, सामाजिक परिवर्तन।

1. प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय सभ्यता और संस्कृति के ऐतिहासिक विकासक्रम में धर्म और आध्यात्मिकता केवल पारलौकिक विश्वास के विषय नहीं रहे हैं, बल्कि उन्होंने सामाजिक क्रियाओं ै(वबपंस ।बजपवदे), संस्थागत ढाँचों और नैतिक मानदंडों को गहराई से संचालित किया है। भारतीय संदर्भ में श्धर्मश की अवधारणा किसी संकीर्ण पूजा–पद्धति, मतवाद या बाह्य कर्मकांडों तक सीमित नहीं रही हैय बल्कि यह मानव जीवन के परम उद्देश्य, समतावादी सामाजिक व्यवस्था, सार्वभौमिक नैतिकता और अस्तित्व के मूलभूत दार्शनिक प्रश्नों से जुड़ी एक व्यापक जीवन–संहिता रही है। उपनिषदों की ज्ञानमीमांसा से उपजा अद्वैत विमर्श, श्रीमद्भगवद्गीता का तार्किक समन्वयवाद, बौद्ध परंपरा की 'निर्वाण' और 'अप्प दीपो भव' की चेतना, तथा मध्यकालीन भक्ति आंदोलन की सामाजिक बहुलता और समतावादी दृष्टिकोण इसके स्पष्ट ऐतिहासिक साक्ष्य हैं। इन सभी आंदोलनों ने अपने–अपने कालखंडों में तत्कालीन सामाजिक विसंगतियों को दूर कर चेतना के परिष्कार का मार्ग प्रशस्त किया था।

- **एसोसिएट प्रोफेसर (समाजशास्त्र), राजकीय महिला महाविद्यालय सैयदराजा, चन्दौली, उत्तर प्रदेश।**
- **सहायक आचार्य, डिपार्टमेंट ऑफ एप्लाइड साइंस एंड ह्यूमैनिटीज, बुद्धा इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (गीडा), गोरखपुर–273209।**

आधुनिक उत्तर–औद्योगिक समाज (Post & Industrial Society), वैश्वीकरण (Globalization) और तीव्र डिजिटल क्रांति (Digital Revolution) के समकालीन संक्रमणकालीन दौर में मानव सभ्यता के समक्ष नए अस्तित्वगत (Existential) और मनोवैज्ञानिक संकट खड़े हो गए हैं। इस तकनीकी युग में यह प्रश्न अत्यंत प्रासंगिक और समाजशास्त्रीय जांच का विषय बन गया है कि क्या पारंपरिक आध्यात्मिक ज्ञान और प्राचीन दार्शनिक सिद्धांत समकालीन मनुष्य की मानसिक अनिश्चितता, अलगाव (Alienation) और पहचान के संकट (Identity Crisis) से कोई तार्किक संवाद स्थापित कर सकते हैं? इसी ऐतिहासिक संक्रांति काल में समकालीन भारतीय आध्यात्मिक विमर्श के दो अत्यंत विशिष्ट और प्रभावी प्रतिमान (Paradigm) उभरकर सामने आते हैं : आचार्य प्रशांत और जगद्गुरु रामभद्राचार्य।

आचार्य प्रशांत का प्रतिमान मुख्य रूप से आधुनिक, शिक्षित और डिजिटल पीढ़ी को केंद्र में रखता है। वे अद्वैत वेदान्त की प्राचीन ज्ञानमीमांसा को शुष्क ग्रंथीय सिद्धांतों से बाहर निकालकर उसे समकालीन जीवन की अस्तित्वगत समस्याओं, अहंकार (Ego) की तार्किक समीक्षा और विवेक (Discrimination) के माध्यम से पुनर्परिभाषा प्रदान करते हैं। उनका संचार मॉडल पूरी तरह से श्नेटवर्कितश (Networked) है, जो पारंपरिक भौगोलिक सीमाओं को लांघकर तार्किक संवाद की स्थापना करता है। इसके विपरीत, जगद्गुरु रामभद्राचार्य शास्त्रीय प्राधिकार (Scriptural Authority) के पारंपरिक घेरे के भीतर स्थित होकर सनातन ज्ञान परंपरा का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे रामानंदी वैष्णव संप्रदाय, संस्कृत साहित्य की समृद्ध भाष्य परंपरा और मर्यादावाद के माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक विरासत की ऐतिहासिक निरंतरता (Cultural Continuity) को संस्थागत रूप से संरक्षित और पुनर्स्थापित करते हैं।

अतः, इन दोनों विशिष्ट विचारकों का यह तुलनात्मक समाजशास्त्रीय एवं दार्शनिक अध्ययन केवल दो व्यक्तियों की तुलना नहीं है, बल्कि यह समकालीन भारतीय समाज में आध्यात्मिकता के परंपरागत रूप (ज्तंकपजपवदंस डवकमस) और आधुनिक नेटवर्कित रूप (Digital Model) के बीच के अंतर्संबंधों, द्वंद्वों और पूरकता को समझने का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और मौलिक अवसर प्रदान करता है। यह अनुसंधान इस बात की पड़ताल करता है कि किस प्रकार समकालीन समाज में परंपरा और आधुनिकता एक–दूसरे को प्रभावित करते हुए मानव चेतना के रूपांतरण की साझा परियोजना पर क्रियाशील हैं (Weigert, 1981; Hervieu-Léger, 2000)।

2. अध्ययन की समस्या (Statement of the Problem)

समकालीन भारतीय समाज तीव्र संरचनात्मक परिवर्तनों से गुजर रहा है। एक ओर पारंपरिक पीठ, मठ, कथा और शास्त्रीय भाष्य की स्थापित व्यवस्थाएं हैं, तो दूसरी ओर यूट्यूब (YouTube), मोबाइल एप्लिकेशन और ऑनलाइन समुदायों के माध्यम से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने वाली नई डिजिटल पीढ़ी है। इस परिदृश्य में मुख्य अकादमिक समस्या यह है किरू क्या आधुनिक डिजिटल आध्यात्मिकता और पारंपरिक शास्त्रीय आध्यात्मिकता एक–दूसरे की विरोधी संरचनाएं हैं, या वे भारतीय ज्ञान परंपरा के दो समानांतर समकालीन रूप हैं ? आचार्य प्रशांत और जगद्गुरु रामभद्राचार्य का दार्शनिक व सामाजिक आधार इस समस्या के वैज्ञानिक विश्लेषण की मांग करता है।

3. शोध के उद्देश्य (Research Objectives)

1. आचार्य प्रशांत के आध्यात्मिक एवं दार्शनिक (अद्वैत वेदान्त) चिंतन का आलोचनात्मक अध्ययन करना।
2. जगद्गुरु रामभद्राचार्य के दार्शनिक एवं भक्तिमूलक (विशिष्टाद्वैत) चिंतन का विश्लेषण करना।
3. दोनों विचारकों के वेदान्तीय दृष्टिकोण, ज्ञान, भक्ति, गुरु और शास्त्र संबंधी अवधारणाओं का तुलनात्मक मूल्यांकन करना।
4. समकालीन भारतीय समाज, युवा पीढ़ी और सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में दोनों मॉडलों की प्रासंगिकता का समाजशास्त्रीय अध्ययन करना।

4. शोध–पद्धति (Research Methodology)

प्रस्तुत शोध–पत्र की प्रकृति गुणात्मक (Qualitative), वर्णनात्मक (Descriptive) एवं तुलनात्मक (Comparative) है। अध्ययन में प्राथमिक और द्वितीयक दोनों स्रोतों का उपयोग किया गया है। आचार्य प्रशांत के विचारों के विश्लेषण के लिए उनकी आधिकारिक वेबसाइट, व्याख्यान और प्रकाशित साहित्यों को आधार बनाया गया है। जगद्गुरु रामभद्राचार्य के दार्शनिक स्थान को समझने के लिए रामानंदी परंपरा की संस्थागत सामग्री तथा विशिष्टाद्वैत वेदान्त पर उपलब्ध वैश्विक अकादमिक शोधों (जैसे RUDN Journal of Philosophy) का संदर्भ लिया गया है। विश्लेषण की मुख्य इकाइयाँ दर्शन, सामाजिक नैतिकता, आधुनिकता और संप्रेषण माध्यमों को बनाया गया है।

5. दार्शनिक विमर्श एवं वैचारिक धरातल (Theoretical & Philosophical Analysis)

5.1 आचार्य प्रशांतरू आधुनिक अद्वैत वेदान्त एवं अहंकार की समीक्षा

आचार्य प्रशांत का चिंतन मुख्यरूप से अद्वैत वेदान्त के उस सिद्धांत पर आधारित है जो परम सत्य के स्तर पर किसी भी द्वैत का निषेध करता है। उनके बौद्धिक मिशन का मुख्य केंद्र मनुष्य का यह प्रश्न है ''मैं कौन हूँ?''वे वेदान्त को केवल एक शुष्क ग्रंथीय सिद्धांत न मानकर उसे समकालीन जीवन की मनोवैज्ञानिक और अस्तित्वगत समस्याओं से जोड़ते हैं।

उनकी दृष्टि में, आधुनिक मनुष्य का दुःख उसकी 'गलत पहचान' (False Identity) के कारण है। व्यक्ति स्वयं को अपने शरीर, सामाजिक भूमिकाओं, संचित इच्छाओं और सांसारिक संबंधों से जोड़कर एक सीमित 'मैं' का निर्माण करता है, जिसे वेदान्त में श्अहंकारश कहा गया है। आचार्य प्रशांत के अनुसार, आध्यात्मिकता का अर्थ चेतना पर नई धारणाएं लादना नहीं है, बल्कि विवेक (Discrimination) के माध्यम से इन गलत और आरोपित धारणाओं को देखना और उनका विसर्जन करना है।

5.2 जगद्गुरु रामभद्राचार्यः विशिष्टाद्वैत, रामानंदी परंपरा और भक्ति

इसके विपरीत, जगद्गुरु रामभद्राचार्य का संपूर्ण चिंतन रामानंदी वैष्णव संप्रदाय के दार्शनिक सिद्धांतों पर आधारित है, जो विशिष्टाद्वैत वेदान्त का प्रतिपादन करता है। विशिष्टाद्वैत में ब्रह्म को निर्गुण या शून्य न मानकर एक सगुण, सविशेष और व्यक्तिगत ईश्वर के रूप में स्वीकार किया जाता है, जहाँ जीव और जगत का ईश्वर के साथ एक विशिष्ट, नित्य संबंध है।

रामभद्राचार्य के विमर्श में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम केवल एक ऐतिहासिक या सांस्कृतिक नायक नहीं, बल्कि साक्षात परम आराध्य हैं। यहाँ साधना का मुख्य मार्ग श्ज्ञानश के केवल बौद्धिक विश्लेषण से नहीं, बल्कि ईश्वर के प्रति पूर्ण आत्म–समर्पण, शरणागति और अनन्य भक्ति से होकर गुजरता है। उनका मुख्य योगदान यह है कि वे भक्ति को केवल एक भावुक संवेग नहीं रहने देते, बल्कि उसे संस्कृत भाष्यों और शास्त्रीय प्रमाणों के माध्यम से एक सुदृढ़ दार्शनिक आधार प्रदान करते हैं।

5.3 समकालीन आध्यात्मिकता का विस्तृत समाजशास्त्रीय सैद्धांतिक ढाँचा

प्रस्तुत अध्ययन को केवल दो दार्शनिक मतों की तुलना तक सीमित करना पर्याप्त नहीं होगा। समाजशास्त्रीय दृष्टि से आध्यात्मिक चिंतन सामाजिक अर्थ–निर्माण, प्राधिकार, सांस्कृतिक पुनरुत्पादन, पहचान–निर्माण, सामाजिक नियंत्रण तथा आधुनिकता के साथ परंपरा के पुनर्संयोजन की प्रक्रिया भी है। अतः इस अध्ययन में दुर्खीम, वेबर, बर्जर एवं लुकमान, बोर्दियू, फूको, गिडेंस, कैस्टेल्स तथा हर्वियू–लेजे की अवधारणाओं को एकीकृत विश्लेषणात्मक ढाँचे के रूप में ग्रहण किया गया है।

- इमाइल दुर्खीमरू दुर्खीम के 'सामूहिक चेतना' (Collective Consciousness) के सिद्धांत के अनुसार धर्म सामूहिक प्रतीकों और नैतिक मानदंडों के माध्यम से सामाजिक एकता निर्मित करता है। इस दृष्टि से राम, रामकथा, भक्ति और शास्त्र केवल व्यक्तिगत आस्था के विषय नहीं हैंय वे सामूहिक सांस्कृतिक स्मृति और नैतिक व्यवस्था के प्रतीक भी हैं। जगद्गुरु रामभद्राचार्य का शास्त्र, रामभक्ति और संस्कृत पर बल इस प्रकार सांस्कृतिक निरंतरता तथा सामूहिक चेतना के पुनरुत्पादन की प्रक्रिया के रूप में पढ़ा जा सकता है।

- **मैक्स वेबर :** वेबर के 'प्राधिकार सिद्धांत' (Theory of Authority) से दोनों आध्यात्मिक प्रतिमानों के बीच अधिक सूक्ष्म अंतर सामने आता है। रामभद्राचार्य की वैधता में पारंपरिक प्राधिकार, शास्त्रीय विद्वत्ता और व्यक्तिगत करिश्माई प्रतिष्ठा का संयोजन दिखाई देता है। इसके विपरीत, आचार्य प्रशांत का प्राधिकार पारंपरिक धार्मिक पदानुक्रम से अपेक्षाकृत कम और बौद्धिक तर्क, व्यक्तिगत करिश्मा तथा डिजिटल दृश्यता से अधिक निर्मित होता है। अतः डिजिटल माध्यम आध्यात्मिक प्राधिकार को समाप्त नहीं करता, बल्कि उसके वैधीकरण के साधनों का पुनर्गठन करता है।

- **पीटर बर्जर एवं थॉमस लुकमानः** बर्जर एवं लुकमान की 'सामाजिक वास्तविकता के निर्माण' (Social Construction of Reality) की अवधारणा के आधार पर दोनों चिंतकों को अर्थ–निर्माता के रूप में समझा जा सकता है। आचार्य प्रशांत वेदान्तीय अवधारणाओं को आधुनिक व्यक्ति की अस्तित्वगत और मनोवैज्ञानिक समस्याओं की भाषा में पुनर्संयोजित करते हैं, जबकि रामभद्राचार्य शास्त्र, भक्ति और सांस्कृतिक परंपरा के माध्यम से व्यक्ति को अर्थ प्रदान करते हैं। दोनों मॉडल अलग–अलग प्रतीकात्मक संसाधनों के द्वारा सामाजिक वास्तविकता की व्याख्या करते हैं।

- **पियरे बोर्दियूः** बोर्दियू के 'सांस्कृतिक एवं प्रतीकात्मक पूँजी' (Cultural and Symbolic Capital) के सिद्धांत से स्पष्ट होता है कि आध्यात्मिक प्रतिष्ठा केवल धार्मिक विश्वास से नहीं बनती। रामभद्राचार्य की संस्कृत–शास्त्रीय विद्वत्ता पारंपरिक सांस्कृतिक पूँजी का रूप लेती है, जिसे

धार्मिक क्षेत्र में प्रतीकात्मक प्राधिकार में परिवर्तित किया जाता है। आचार्य प्रशांत के मामले में दार्शनिक ज्ञान, तर्कपूर्ण अभिव्यक्ति, आधुनिक संप्रेषण कौशल और डिजिटल पहुँच एक अलग प्रकार की सांस्कृतिक तथा प्रतीकात्मक पूँजी निर्मित करते हैं।

- **मिशेल फूकोः** फूको की 'शक्तिध्ज्ञान' (Power/Knowledge) और 'आत्म–निर्माण;(Technologies of the Self) की अवधारणा से आध्यात्मिक विमर्श के व्यक्तित्व–निर्माणकारी पक्ष को समझा जा सकता है। आचार्य प्रशांत का 'मैं कौन हूँ ?' और अहंकार की समीक्षा व्यक्ति को अपने सामाजिक रूप से निर्मित स्व (Self) की आलोचनात्मक जाँच की ओर ले जाती है। रामभद्राचार्य का विमर्श व्यक्ति को शास्त्र, भक्ति, मर्यादा और गुरु–परंपरा के भीतर एक नैतिक–आध्यात्मिक व्यक्तित्व के रूप में निर्मित करता है। अतः दोनों ही आत्म–परिवर्तन की परियोजनाएँ हैं, किंतु उनके आत्म–निर्माण के मार्ग अलग हैं।

- एंथनी गिडेंसरू गिडेंस की 'परावर्तक आधुनिकता' (Refleive Modernity) की अवधारणा आचार्य प्रशांत के चिंतन को समझने में विशेष उपयोगी है। आधुनिक व्यक्ति अपने जीवन–निर्णयों, पहचान और विश्वासों का निरंतर पुनर्मूल्यांकन करता है। इस संदर्भ में आध्यात्मिक आत्म–अन्वेषण व्यक्तिगत पहचान की पुनर्रचना का साधन बन सकता है। दूसरी ओर, रामभद्राचार्य का मॉडल यह दिखाता है कि आधुनिक अनिश्चितता का उत्तर परंपरा से पूर्ण विच्छेद के रूप में आवश्यक नहीं है; परंपरा भी आधुनिक जीवन में अर्थ और नैतिक स्थिरता का संसाधन बन सकती है।

- **मैनुएल कैस्टेल्सः** कैस्टेल्स के 'नेटवर्क समाज' (Network Society) के सिद्धांत के आधार पर आचार्य प्रशांत की डिजिटल उपस्थिति को 'नेटवर्कित आध्यात्मिकता' के रूप में समझा जा सकता है। आध्यात्मिक संचार अब केवल आश्रम, मठ या प्रत्यक्ष सभा तक सीमित नहीं है। डिजिटल माध्यम भौगोलिक दूरी को कम करते हैं और ऐसे दर्शक–समुदाय निर्मित करते हैं जिनकी सदस्यता स्थान से नहीं बल्कि साझा सामग्री, रुचि और सहभागिता से बनती है। फिर भी डिजिटल माध्यमों को स्वतः लोकतांत्रिक मानना उचित नहीं होगा, क्योंकि दृश्यता, एल्गोरिद्मिक चयन और ध्यान की अर्थव्यवस्था (।जजमदजपवद म्बवदवउल) नए प्रकार की असमानताएं उत्पन्न कर सकती हैं।

- **दानीएल हर्वियू–लेजेः** हर्वियू–लेजे की श्धर्म स्मृति की श्रृंखला के रूप मेंश (Religion as a Chain of Memory) की अवधारणा रामभद्राचार्य के चिंतन को समझने में विशेष रूप से उपयोगी है। धार्मिक परंपरा अतीत, वर्तमान और भविष्य को जोड़ने वाली सामूहिक स्मृति के रूप में कार्य करती है। शास्त्र, रामकथा, संस्कृत भाष्य और गुरु–परंपरा ऐसी स्मृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संप्रेषित करने वाले माध्यम हैं। इस अर्थ में परंपरा केवल अतीत का संरक्षण नहीं, बल्कि वर्तमान में अतीत की पुनर्व्याख्या भी है।

5.4 नेटवर्कित आध्यात्मिक प्राधिकाररू एक उभरती समाजशास्त्रीय अवधारणा

प्रस्तुत अध्ययन की एक अत्यंत महत्वपूर्ण और मौलिक सैद्धांतिक स्थापना 'नेटवर्कित आध्यात्मिक प्राधिकार' (Networked Spiritual Authority) की समकालीन अवधारणा है। पारंपरिक

धार्मिक और सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत आध्यात्मिक प्राधिकार (Spiritual Authority) का वैधीकरण मुख्यतः स्थापित संस्थागत पदानुक्रम, गुरु–शिष्य परंपरा, स्वीकृत संप्रदाय, मठ/पीठ और प्रत्यक्ष भौतिक संवाद के माध्यम से संचालित होता था। मैक्स वेबर के प्राधिकार सिद्धांत के विपरीत, आधुनिक डिजिटल और नेटवर्क समाज (Network Society) में इस प्राधिकार के निर्माण और सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया में एक व्यापक संरचनात्मक बदलाव आया है।

डिजिटल युग में आध्यात्मिक प्राधिकार केवल वंशानुगत या पारंपरिक रूप से प्राप्त नहीं होता, बल्कि वह निरंतर एल्गोरिद्मिक दृश्यता (Algorithmic Visibility), अनवरत डिजिटल सामग्री–उत्पादन (Content Production), व्यक्तिगत प्रस्तुतिकरण (Self-Presentation), वैश्विक दर्शक सहभागिता (Audience Engagement) और नेटवर्क प्रभाव (Network Effect) के जटिल अंतर्संबंधों से निर्मित होता है। इसे मैनुएल कैस्टेल्स के सिद्धांतों के आलोक में देखा जाए तो इंटरनेट और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ने ज्ञान के प्रसार को 'डिसेंट्रलाइज्ड' (Decentralized) कर दिया है। इसलिए, समकालीन समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में डिजिटल आध्यात्मिकता को पारंपरिक पदानुक्रम के पूर्ण अंत के रूप में नहीं, बल्कि प्राधिकार के 'पुनर्गठन और पुनर्संयोजन' (Restructuring and Reconfiguration) के रूप में समझा जाना अधिक वैज्ञानिक और उपयुक्त होगा। डिजिटल धर्म (Digital Religion) के क्षेत्र में हो रहे वैश्विक शोध भी यह स्पष्ट करते हैं कि ऑनलाइन और ऑफलाइन माध्यमों के बीच का यह धुंधलापन नए प्रकार की पहचान, अमूर्त समुदायों और शक्ति–संबंधों को जन्म दे रहा है।

5.5 सांस्कृतिक पुनरुत्पादन बनाम सांस्कृतिक परिवर्तन

पियरे बोर्दियू (Pierre Bourdieu) के सांस्कृतिक समाजशास्त्र के प्रकाश में यदि दोनों विचारकों के मॉडलों का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाए, तो वे परंपरा के साथ जुड़ाव के दो समानांतर आयाम प्रस्तुत करते हैं। जगद्गुरु रामभद्राचार्य का प्रतिमान शास्त्रीय विद्वत्ता, प्रामाणिक ग्रंथों, संस्कृत भाष्य और अविरल लोक–कथाओं के माध्यम से श्सांस्कृतिक पुनरुत्पादनश (Cultural Reproduction) की प्रक्रिया को गति देता है। वे सामूहिक स्मृति (Collective Memory) और पारंपरिक सांस्कृतिक पूँजी को आने वाली पीढ़ी में अक्षुण्ण बनाए रखने का कार्य करते हैं।

इसके विपरीत, आचार्य प्रशांत का मॉडल विरासत में प्राप्त रूढ़िवादी धारणाओं, सामाजिक अंधविश्वासों और धार्मिक कर्मकांडों के 'आलोचनात्मक पुनर्पाठ' (Critical Reconstruction) तथा व्यक्तिगत आत्म–परावर्तन (Self-Reflection) को केंद्रीय प्राथमिकता देता है। वे अद्वैत वेदान्त के सिद्धांतों को आधुनिक तार्किक बुद्धिवाद (Rationalism) से जोड़कर एक प्रकार का बौद्धिक और सांस्कृतिक परिवर्तन (Cultural Change) निर्मित करना चाहते हैं।

फिर भी, इन दोनों प्रतिमानों को समाजशास्त्रीय रूप से एक–दूसरे के विपरीत ध्रुवों पर खड़ा करना पूरी तरह अनुचित होगा। जहाँ एक ओर रामभद्राचार्य पारंपरिक शास्त्र–चेतना को समकालीन आधुनिक युग में सक्रिय और प्रासंगिक बनाए रखते हैं, वहीं दूसरी ओर आचार्य प्रशांत दार्शनिक ज्ञान को आधुनिक डिजिटल भाषा और प्रतीकों में ढालकर उसकी पुनर्स्थापना करते हैं। अंततः, दोनों ही मॉडल अपने–अपने विशिष्ट प्रतीकात्मक संसाधनों के माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक परंपरा के 'पुनर्निर्माण और निरंतरता' (Reconstruction and Continuity) का ही मार्ग प्रशस्त करते हैं।

6. समाजशास्त्रीय विश्लेषण एवं तुलनात्मक प्रतिमान (Sociological Evaluation)

6.1 गुरु की भूमिका और शास्त्र का पुनर्पाठ

भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक संरचना में 'गुरु' और 'शास्त्र' केवल धार्मिक अवधारणाएँ नहीं हैं, बल्कि वे ज्ञान के प्राधिकार, नैतिक अनुशासन, सामाजिक नियंत्रण तथा सांस्कृतिक निरंतरता के महत्वपूर्ण आधार रहे हैं। भारतीय परंपरा में गुरु को ज्ञान के संप्रेषक और शास्त्र को ज्ञान के प्रमाण के रूप में स्वीकार किया गया है। किंतु आधुनिकता, वैज्ञानिक चेतना और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के विस्तार के साथ गुरु और शास्त्र की पारंपरिक भूमिकाओं की पुनर्व्याख्या भी आवश्यक हुई है। इसी संदर्भ में आचार्य प्रशांत और जगद्गुरु रामभद्राचार्य के चिंतन में गुरु तथा शास्त्र को लेकर दो भिन्न किंतु महत्वपूर्ण वैचारिक प्रतिमान दिखाई देते हैं।

आचार्य प्रशांत का दृष्टिकोणरू आचार्य प्रशांत के प्रतिमान में गुरु की भूमिका पारंपरिक पदानुक्रम और अंध–स्वीकृति से मुक्त दिखाई देती है। उनके लिए गुरु किसी व्यक्ति की स्वतंत्र चिंतन–क्षमता को समाप्त करने वाला प्राधिकारी नहीं, बल्कि व्यक्ति को स्वयं के भीतर प्रश्न उठाने के लिए प्रेरित करने वाला मार्गदर्शक है। उनका संवादात्मक और प्रश्नोन्मुख दृष्टिकोण ैवबतंजपब डमजीवक से साम्य रखता है, जिसमें प्रश्नों के माध्यम से व्यक्ति अपने पूर्वाग्रहों, मान्यताओं और अहंकार का परीक्षण करता है। इस दृष्टिकोण में आध्यात्मिकता का उद्देश्य केवल धार्मिक अनुष्ठानों का पालन करना नहीं, बल्कि व्यक्ति की चेतना में परिवर्तन उत्पन्न करना है।

शास्त्रों के संदर्भ में भी उनका दृष्टिकोण आलोचनात्मक पुनर्पाठ पर आधारित है। वे उपनिषदों और भगवद्गीता जैसे ग्रंथों को आधुनिक जीवन की समस्याओं, अहंकार, भय, इच्छा, उपभोक्तावाद, सामाजिक रूढ़ियों और मानसिक दासताकृके संदर्भ में पढ़ने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार शास्त्र उनके लिए केवल ऐतिहासिक या धार्मिक दस्तावेज नहीं, बल्कि आत्मचिंतन और जीवन–परिवर्तन के सक्रिय साधन बन जाते हैं। उनका जोर शास्त्र के शब्दों की यांत्रिक स्वीकृति के बजाय उसके मूल दार्शनिक आशय को समझने पर दिखाई देता है।

जगद्गुरु रामभद्राचार्य का दृष्टिकोण : इसके विपरीत, जगद्गुरु रामभद्राचार्य का मॉडल गुरु को सनातन गुरु–शिष्य परंपरा के आध्यात्मिक वाहक और शास्त्रीय ज्ञान के संरक्षक के रूप में स्थापित करता है। उनके चिंतन में शास्त्र ज्ञान, धर्म, नैतिकता और सामाजिक आचरण के महत्वपूर्ण प्रमाण हैं। इसलिए उनका दृष्टिकोण शास्त्र की प्रामाणिकता, परंपरा की निरंतरता और उसके व्यवस्थित भाष्य पर अधिक बल देता है। वे पारंपरिक भाष्य शैली के माध्यम से शास्त्रीय ज्ञान को वर्तमान पीढ़ी तक पहुँचाने का कार्य करते हैं।

उनके दृष्टिकोण में गुरु का दायित्व केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि शिष्य में मर्यादा, अनुशासन, श्रद्धा, शरणागति और भक्ति जैसे नैतिक गुणों का विकास करना भी है। नवधा भक्ति तथा रामभक्ति के माध्यम से व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक चरित्र का निर्माण उनके चिंतन का महत्वपूर्ण पक्ष है। इस मॉडल में सामाजिक परिवर्तन का आधार परंपरा के निषेध के बजाय उसके संरक्षण और पुनर्स्थापन में देखा जाता है।

अतः दोनों विचारकों के बीच मूल अंतर शास्त्र के प्रति दृष्टिकोण और गुरु की प्राधिकारात्मक भूमिका में दिखाई देता है। आचार्य प्रशांत जहाँ प्रश्न, तर्क, आत्मचिंतन और आधुनिक पुनर्पाठ के माध्यम से आध्यात्मिक ज्ञान को समकालीन बनाते हैं, वहीं जगद्गुरु रामभद्राचार्य परंपरा, शास्त्रीय प्रामाणिकता,

गुरु–शिष्य संबंध और भक्ति–आधारित नैतिक अनुशासन को प्राथमिकता देते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से कहा जा सकता है कि पहला मॉडल आलोचनात्मक आध्यात्मिक आधुनिकता का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि दूसरा परंपरा–आधारित आध्यात्मिक निरंतरता का। दोनों ही दृष्टिकोण भारतीय समाज में नैतिकता और आध्यात्मिकता की भूमिका को अलग–अलग मार्गों से पुनर्स्थापित करने का प्रयास करते हैं।

6.2 डिजिटल आध्यात्मिकता बनाम पारंपरिक संस्थागत मॉडल

मैक्स वेबर और इमाइल दुर्खीम के धर्म के समाजशास्त्र के सिद्धांतों के आलोक में यदि दोनों के संप्रेषण माध्यमों को देखा जाए, तो यह सामाजिक परिवर्तन का एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है। आचार्य प्रशांत का मॉडल 'डिजिटल आध्यात्मिकता' का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ पारंपरिक भौगोलिक सीमाओं (मठ/आश्रम) को तोड़कर वैश्विक स्तर पर एक अमूर्त ऑनलाइन समुदाय (Online Community) का निर्माण किया जाता है। वहीं, जगद्गुरु रामभद्राचार्य पारंपरिक सार्वजनिक संचार (जैसे रामकथा, सामूहिक समागम) के साथ आधुनिक जनमाध्यमों का एक संतुलित संयोजन प्रस्तुत करते हैं, जो सामाजिक एकता और सामूहिक चेतना (Collective Consciousness) को सुदृढ़ करता है।

7. **तुलनात्मक तालिका (Comparative Matrix)**

विश्लेषण का आयाम/आधार	आचार्य प्रशांत	जगद्गुरु रामभद्राचार्य
दार्शनिक अभिमुखता	अद्वैत वेदान्त	रामानंदी वैष्णव/विशिष्टाद्वैत
केंद्रीय आध्यात्मिक प्रश्न	मैं कौन हूँ? (आत्म–अन्वेषण)	जीव–ईश्वर संबंध एवं शरणागति
ईश्वर की अवधारणा	परम सत्य/निर्गुण चेतना का विमर्श	सगुण श्री राम (परम आराध्य)
मुख्य साधन	विवेक, आत्मज्ञान एवं भ्रम का निवारण	नवधा भक्ति, शास्त्रबोध एवं मर्यादा
संप्रेषण एवं सामाजिक आधार	डिजिटल माध्यम, आधुनिक शिक्षित युवावर्ग	पारंपरिक शास्त्रीय विमर्श, व्यापक जनसमुदाय
सामाजिक परिवर्तन मॉडल	वैयक्तिक चेतना → व्यवहार परिवर्तन → समाज	शास्त्र/संस्कृति→ नैतिक व्यक्ति → सामाजिक निरंतरता
प्राधिकार का आधार	बौद्धिक तर्क, करिश्मा, डिजिटल दृश्यता	शास्त्रीय विद्वत्ता, परंपरा, गुरु–प्रतिष्ठा, करिश्मा

ज्ञान का स्वरूप	प्रश्न, विवेक, आत्म–अन्वेषण	शास्त्रबोध, भाष्य, भक्ति और परंपरा
व्यक्ति की भूमिका	आत्म–चिंतनशील और आलोचनात्मक व्यक्ति	भक्ति, मर्यादा और परंपरा से संबद्ध व्यक्ति
सामाजिक आधार (विस्तृत)	डिजिटल, नेटवर्कित और अपेक्षाकृत वैयक्तिक सहभागिता	संस्थागत, सांस्कृतिक और सामुदायिक सहभागिता
संचार का प्रमुख रूप	डिजिटल माध्यम, ऑनलाइन व्याख्यान	कथा, शास्त्रीय प्रवचन, संस्थागत एवं जनसंचार
सांस्कृतिक पूँजी	आधुनिक बौद्धिक एवं डिजिटल पूँजी	शास्त्रीय, भाषायी और धार्मिक पूँजी
मुख्य सामाजिक प्रक्रिया	व्यक्तीकरण, परावर्तन और पुनर्व्याख्या	सांस्कृतिक निरंतरता, सामूहिक स्मृति और पुनरुत्पादन
आध्यात्मिक परिवर्तन	अहंकार/गलत पहचान की आलोचना से आत्म–परिवर्तन	भक्ति, शरणागति और मर्यादा से नैतिक–आध्यात्मिक परिवर्तन
आधुनिकता से संबंध	परंपरा का आलोचनात्मक पुनर्पाठ	परंपरा का संरक्षण एवं समकालीन पुनर्पाठ

8. आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation)

शोध की निष्पक्षता के लिए दोनों प्रतिमानों की सीमाओं का विश्लेषण आवश्यक है। आचार्य प्रशांत की मुख्य शक्ति उनकी आधुनिक तार्किक भाषा और व्यापक डिजिटल पहुँच है। किंतु, अत्यंत गूढ़ दार्शनिक सिद्धांतों को जब छोटे वीडियो (Shorts/Clips) के रूप में डिजिटल प्लेटफॉर्म पर प्रस्तुत किया जाता है, तो उसमें विचारों के सरलीकरण (व्अमतेपउचसपपिबंजपवद) का जोखिम बना रहता है। दूसरी ओर, जगद्गुरु रामभद्राचार्य की शक्ति उनकी अगाध शास्त्रीय विद्वत्ता और सांस्कृतिक परंपरा की निरंतरता है। परंतु, इस पारंपरिक विमर्श के सामने यह चुनौती हमेशा बनी रहती है कि वह समकालीन आधुनिक, लोकतांत्रिक और वैज्ञानिक रूप से जागरूक समाज की जटिल, नई समस्याओं के साथ कितनी निरंतरता और लचीलेपन से संवाद भली–भाँति कर पाता है।

9. समाजशास्त्रीय निष्कर्ष (Sociological Conclusion)

5. विवेकपूर्ण अनुकूलन– आधुनिकता और वैश्वीकरण धर्म या आध्यात्मिकता को समाप्त नहीं करते, बल्कि उसके नए, परिष्कृत रूप पैदा करते हैं।
6. संरचनात्मक परिवर्तन– डिजिटल तकनीक ने आध्यात्मिक ज्ञान के संचरण के पारंपरिक पदानुक्रम (गुरु–शिष्य–आश्रम) को पूरी तरह लोकतांत्रिक और वि–स्थानिक (De-territorialized) बना दिया है।

7. सह–अस्तित्व– परंपरा और आधुनिकता के बीच केवल द्वंद्व नहीं होताय दोनों के बीच पुनर्व्याख्या और अनुकूलन की प्रक्रियाएं समानांतर चलती हैं।

8. **सांस्कृतिक अर्थ–निर्माताः** समकालीन आध्यात्मिक नेतृत्व केवल धार्मिक उपदेशक नहीं है, बल्कि वे आधुनिक जीवन की अस्तित्वगत समस्याओं (जैसे पर्यावरण संकट, उपभोक्तावाद) के लिए नए 'सांस्कृतिक अर्थ' निर्मित कर रहे हैं।

9. **भारतीय बहुलतावाद–** दोनों के बीच का दार्शनिक अंतर भारतीय ज्ञान परंपरा की कमजोरी नहीं, बल्कि उसकी बहुलतावादी (Pluralistic) प्रकृति का सजीव उदाहरण है।

10- संदर्भ–सूची (Extended Bibliography)

- Acharya Prashant. (n.d.). Vedanta and Self-Inquiry. PrashantAdvait Foundation. Retrieved from Official Literature.
- Berger, P. L., & Luckmann, T. (1966). The social construction of reality. Doubleday.
- Bourdieu, P. (1986). The forms of capital. In J. G. Richardson (Ed.), Handbook of theory and research for the sociology of education (pp. 241–258). Greenwood.
- Campbell, H. A. (2013). Digital religion: Understanding religious practice in new media worlds. Routledge.
- Campbell, H. A. (2013). Religion and the Internet: A microcosm for studying Internet trends and implications. New Media & Society, 15(5), 680–694.
- Campbell, H. A., & Evolvi, G. (2020). Contextualizing current digital religion research on emerging technologies. Human Behavior and Emerging Technologies, 2(1), 5–17.
- Castells, M. (2001). The Internet galaxy: Reflections on the Internet, business, and society. Oxford University Press.
- Castells, M. (2009). Communication power. Oxford University Press.
- Cheong, P. H. (2013). Authority. In H. A. Campbell (Ed.), Digital religion: Understanding religious practice in new media worlds (pp. 88–103). Routledge.
- Demchenko, M. B. (2022). Sri Bhagavadacharya's Approach to Commenting on and Propagating of Vishishtadvaita-Vedanta within the XXth Century's Ramanandi Tradition. RUDN Journal of Philosophy, 26(2), 382–391.
- Durkheim, Émile. (1912/1995). The Elementary Forms of Religious Life. Oxford University Press / Free Press.
- Foucault, M. (1988). Technologies of the self. In L. H. Martin, H. Gutman, & P. H. Hutton (Eds.), Technologies of the self (pp. 16–49). University of Massachusetts Press.
- Giddens, A. (1991). Modernity and self-identity. Stanford University Press.
- Goffman, Erving. (1959). The Presentation of Self in Everyday Life. Doubleday Anchor Books.
- Hervieu-Léger, D. (2000). Religion as a chain of memory. Polity Press.
- Mills, C. Wright. (1959). The Sociological Imagination. Oxford University Press.
- Radhakrishnan, S. (1923). Indian Philosophy (Vols. 1 & 2). Oxford University Press.
- Weber, Max. (1920/1963). The Sociology of Religion. Beacon Press.
- Weigert, A. J. (1981). Sociology of Everyday Life. Longman.